Historicity Research Journal
Volume 2 | Issue 3 | Nov 2015

Impact Factor : 0.4521(UIF)
ISSN:- 2393-8900

Research Article

आर्य समाज का समाज सुधार में योगदान

रामबाबू मेहर

सहायक प्राध्यापक (इतिहास) , शा. गृहविज्ञान स्नातकोतर महाविद्यालय,
होशंगाबाद (म.प्र.)

शोध सारांश

भारत को जिस तरह बिट्रिश सरकार का आर्थिक और बाद में राजनीतिक उपनिवेश बना दिया गया था, उसके विरूद्ध भारतीयों की ओर से तीव्र प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक था। चूंकि भारत धीरे–धीरे पश्चिमी विचारों की ओर बढ़ने लगा था, अतः प्रतिक्रिया सामाजिक क्षेत्र से आना स्वाभाविक कार्य थी। यह प्रतिक्रिया 19 वीं शताब्दी में उठ खड़े हुए सामाजिक सुधार आन्दोलनों के रूप में सामने आई। ऐसे ही समाज सुधार आंदोलनों में आर्यसमाज का नाम आता है। आर्यसमाज ने विदेशी जुआ उतार फेकनें के लिए, समाज में स्वयं आंतरिक सुधारों को कर, अपना कार्य किया। इसने आधुनिक भारत में प्रारंभ हुए पुर्नजागरण को नई दिशा दी। साथ ही भारतीयों में भारतीयता को अपनाने, प्राचीन संस्कृति को मौलिक रूप में स्वीकार करने, पश्चिमी प्रभाव को विशुद्ध भारतीयता यानी ''वेदों की ओर लोटो'' के नारे के साथ समाप्त करने तथा सभी भारतीयों को एकताबद्ध करने के लिए प्रेरित किया।

शब्द संकेत –

जातिमूलक समाज, छुआछूत, वेदसार, जागरण, आत्मोन्नति, अन्धविश्वास।

परिचय –

आर्यसमाज, 19 वीं शताब्दी में भारत में समाज सुधार के आंदोलनों में अग्रणी था। जिसकी स्थापना 1875 ई. में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने बम्बई (मुम्बई) में की थी। शीघ्र ही इसकी प्रसिद्धि तत्कालीन समाज विचारकों, आचार्यों, समाज सुधारकों आदि को प्रभावित करने में सफल हुई, और कुछ वर्षों बाद ही आर्यसमाज की संपूर्ण भारत के प्रमुख शहरों में शाखायें स्थापित हो गई। स्वामीजी के विद्वतापूर्ण व्याख्यानों तथा चमत्कारिक व्यक्तित्व ने युवाओं को आर्यसमाज की ओर मोड़ा। सही अर्थो में आर्य समाज अन्य समकालीन सामाजिक धार्मिक आंदोलनों में अधिक राष्ट्रवादी और भारत में पनप रहे पश्चिमीकरण के विरूद्ध अधिक आक्रमणकारी स्वभाव रखने वाला आंदोलन था। जिसमें उत्कट धार्मिक राष्ट्रवादी स्वर विद्यमान था। स्वामीजी आधुनिक भारत के धार्मिक नेताओं में प्रथम महापुरूष थे जिन्होने 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया।

लक्ष्य एवं उद्देश्य – इस शोध पत्र को लिखने के निम्न उद्देश्य हैं :–

1.आर्य समाज द्वारा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा समाज सुधार हेतु किए गए कार्यों को पुनः सामने लाना।
2.इसके माध्यम से समाज में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को मजबूती प्रदान करना, राष्ट्र को आत्मनिर्भर बनाना तथा वैश्विक स्तर पर स्थापित करना।

अध्ययन का महत्व :–

1.शोधपत्र के माध्यम से इस विषय पर एक महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत करना।
2.लोगों में आर्य समाज तथा उसके सिद्धान्तों में रूचि जागृत करना।
3.धार्मिक व सामाजिक रूप से राष्ट्र जागरण होना।
4.राष्ट्रीय व सामाजिक मूल्यों को स्थापित करना।

शोध सामाग्री व शोध–प्रवृधि :–

शोधपत्र मुख्यतः प्राथमिक व द्वितीयक स्त्रोत सामग्री पर आधारित है। प्राथमिक स्त्रोतों में स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा लिखित सत्यार्थ प्रकाश एक महत्वनूर्ण ग्रन्थ है। द्वितीयक स्त्रोत सामग्री का संग्रह व अध्ययन विभिन्न क्षेत्रों से किया गया यथा– पुस्तकें, शोध पत्रिकायें, शोधपत्र, इंटरनेट और अन्य संग्रह से।

आर्य समाज और दयानंद सरस्वती

भारत में बिट्रिश काल में जो जनजागरण समाज धर्म व राजनीतिक सुचिता हेतु प्रारंभ हुए वे उदीयमान राष्ट्रीय चेतना और उनके बीच पश्चिम के उदारवादी विचारों के प्रसार का परिणाम थे। इन आन्दोलनों ने धीरे–धीरे सामाजिक नवनिर्माण प्रारंभ किया और समस्त भारत में इनकी उपस्थिति देखी गई।[1] आर्य समाज ने अपनी स्थापना से ही सामाजिक कुरीतियों के विरूद्ध आन्दोलन का शंखनाद किया। जैसे–जातिवादी जड़मूलक समाज को तोड़ना, महिलाओं के लिए समानाधिकार, बालविवाह का उन्मूलन, विधवा विवाह का समर्थन, निम्न जातियों को सामाजिक अधिकार प्राप्त होना आदि। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना के पीछे उपरोक्त सामाजिक नवजागरण को मुख्य आधार बनाया। उनका विश्वास था कि नवीन प्रबुद्ध भारत में, नवजागृत होते समाज में, नये भारत का निर्माण करना है तो समाज को बंधन मुक्त करना प्रथम कार्य होना चाहिए। इसीलिए उन्होनें इस बात पर जोर दिया, कि 'वेद' अमोध हैं, और सभी तरह का ज्ञान इनमें समाहित है, अर्थात जड़तावादी समाज के दर्प को चूर करने के लिए वेदों को अपनाना आवश्यक है।[2]

स्वयं ब्राह्मण होते हुए भी स्वामी जी ने ब्राह्मणों की सत्ता के खण्डन का प्रतिपादन किया और धार्मिक अंधविश्वास व कर्मकाण्डों की तीव्र भर्त्सना की। गृहत्याग के बाद जब वे उत्तर भारत की यात्रा पर थे तब उन्होनें सच्चे भारत का दिग्दर्शन किया। एक ऐसा भारत जिसमें चारों ओर अज्ञान व्याप्त था, अन्धविश्वास फैला था और जाति व्यवस्था से उत्पन्न कलुषता समाज के नैतिक पतन की ओर बढी चली जा रही थी। हिन्दू समाज की ऐसी विपन्न स्थिति को देखकर स्वामीजी का हृदय द्रवित हो गया और उन्होनें समाज के परिशोधन का संकल्प किया। इस हेतु स्वामीजी ने प्राचीन हिन्दू संस्कृति का सहारा लिया और भारतीय समाज के समक्ष वेदों की नवीन व्याख्या प्रस्तुत की। अल्पकाल में ही वे भारत के समाज सुधार के क्षेत्र में नवीन ज्ञान–ज्योति के रूप में उदयीमान हुए। इसमें उन्होनें पाया कि भारतीय युवा पाश्चात्य अनुकरण पर जोर दे रहा है। अतः उन्होनें पाश्चात्य संस्कृति पर शक्तिशाली प्रहार किया और भारतीय गौरव को सदैव ऊंचा किया।

आर्यसमाज की स्थापना के लगभग दो वर्ष पश्चात 1877 ई. को लाहौर में स्वामीजी ने आर्य समाज के नियम निर्धारित एवं प्रकाशित किए। उनके मूल में भारत में वैदिक धर्म की प्रतिष्ठा और देश में राजनीतिक सामाजिक पुर्नजागरण का उद्देश्य विधमान था।[3]

आर्य समाज ने निम्न नियम निर्धारित किए[4]–

1.सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते है, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।
2.ईश्वर सच्चिदानन्द, निराकार, र्स्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा निर्विकार अनुपम पवित्र, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यायी, अमर, अजर, नित्य और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करना योग्य है।
3.वेद सभी सत्य विधाओं की पुस्तक हैं। वेदों का पठन–पाठन आर्यों का परमधर्म है।
4.सभी को काम धर्मानुसार अर्थात सत्य और असत्य को विचार करके करना चाहिए।
5.सत्य को गृहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा अध्त रहना चाहिए।
6.संसार का उपकार करना समाज का मूल उद्देश्य है, अर्थात शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना है।
7.सभी से शान्तिपूर्वक, धर्मानुसार तथा यथायोग्य वर्तना करना चाहिए।
8.अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करना चाहिए।
9.प्रत्येक व्यक्ति को अपनी उन्नति में ही सन्तुष्टि नहीं रहना चाहिए। अपितु सब की उन्नति का प्रयास करना चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी, नियम पालन में परतंत्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब

स्वतंत्र रहें।

इस तरह स्वामीजी ने आर्य समाज के जो नियम प्रतिपादित किए वे तत्कालीन सभी समाज सुधार आंदोलनों व समीतियों से सर्वथा भिन्न थे। सामान्यतः स्वामीजी ने भारतीय समाज तथा हिन्दूधर्म में प्रचालित दोषों को उजागर करने के साथ ही आंचलिक पंथों और अन्य धर्मो की भी आलोचना की।[5] पुरोहितवाद पर करारा प्रहार करते हुए स्वामीजी ने माना था कि स्वार्थों और अज्ञानी पुरोहितों ने पुराणों जैसे ग्रंथो का सहारा लेकर हिन्दू धर्म का भ्रष्ट किया है।[6] स्वामी जी धर्म सुधारक के रूप में मूर्तिपूजा, कर्मकाण्ड, पुराणपंथी, तन्त्रवाद के घोर विरोधी थे। इसके लिए उन्होने वेदों का सहारा लेकर विभिन्न दृष्टांत किए। इससे इन्होने सुसुप्त भारतीय जनमानस को चेतन्य करने का अदभुत प्रयास किया।

स्वामी जी ने हिन्दुओं को हीन, पतित और कायर होने के भाव से मुक्त किया और उनमें उत्कट आत्मविश्वास जागृत किया जो कि भारत में समाज सुधार का महत्वपूर्ण तथ्य है। फलस्वरूप समाज पश्चिम की मानसिक दासता के विरूद्ध दृढ आत्मविश्वास तथा संकल्प के साथ विद्रोह कर सके। इन्ही क्रांतीकारी विचारों के कारण वेलेंटाइन शिरोल ने स्वामीजी को इण्डियन अरनेस्ट कहा ।[7]

भारतीय हिन्दू समाज पर पश्चिम के प्रभाव से स्वामीजी अत्यधिक चिंतित रहते थे। फलस्वरूप उन्होनें इस्लाम व ईसाइयत पर प्रहार करते हुए कहा कि ये दोनों धर्म भारत में अपने प्रसार हेतु संघर्ष कर रहे हैं। एक बार मेडम ब्लैवाट्सकी को लिखे पत्र में उन्होनें कहा कि 'जिस प्रकार दिन और रात एक दूसरे के विपरीत हैं वैसे ही सभी धर्म एक दूसरे के विपरीत है।'[8] इस तरह विदेशी धर्म प्रचार के समक्ष उन्होनें हिन्दू धर्म की मजबूत दीवार खड़ी कर दी।

यही कारण है कि उन्होनें भारत का धार्मिक, सामाजिक ओर राष्ट्रीय एकीकरण करना अपना उद्देश्य निर्धारित किया और भारत में जातीय वर्ग भेदभावों को मिटाकर देश में सामाजिक एकता लाने का प्रयास किया। महिलाओं की स्थिति में सुधार, अशिक्षा, बालविवाह, मूर्तिपूजा, कर्मकाण्ड, बालिका शिक्षा, आदि क्षेत्रों में स्वामी जी का प्रयास श्लाद्यनीय है।[9]

आर्य समाज एक प्रकार से भारतीय जनता के राष्ट्रीय जागरण का ही एक रूप था। चूंकि इसका आधार सीमित तथा अन्य धर्मों, विशेषता ईसाई और इस्लाम के प्रति नकारात्मक था। अतः यह मात्र हिन्दू समाज तक ही सीमित रहा। आर्य समाज की भूमिका प्रगतिशील थी जैसे–धार्मिक, अन्धविश्वास, पुरोहितवाद का खण्डन, बहुदेववाद का विरोध जनशिक्षा का समर्थन, उपजातियों का उन्मूलन, स्त्री–पुरूष समानता आदि परंतु वेदों की अमोधता तथा समग्र ज्ञान का आधार वेदों को स्वीकार करना, चर्तुवर्ण व्यवस्था का समर्थन उसकी प्रतिगामी भूमिका के परिचायक थे।[10]

फिर भी आर्यसमाज ने तत्कालीन, भारतीय समाज की आवश्यकता को अनुभव कर उसके सड़े–गले विचारों को बाहर कर शुद्धिकरण का नारा दिया। भारतीय जनमानस के समक्ष आत्मशुद्धि, प्राचीन भारतीय संस्कृति तथा भारतीय भाषा जैसी अद्भुत अवधारणा से सोई हुई राष्ट्रीयता को पुनः उभारने, शक्ति को संरक्षित करने तथा समाज सुधार के माध्यम से राष्ट्र जागरण कर भारत की आजादी हेतु अथक प्रयत्न किए। अतः आर्य समाज को संपूर्ण भारत में विशेषतः उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश तथा पंजाब में आशातीत सफलता प्राप्त हुई।

संदर्भ सूची–

1.देसाई, ए. आर. – ''भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि'' मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, दिल्ली व अन्य, पुर्नमुद्रण–2000 पृ. 191
2. वही – पृ. 231
3.जोशी, अनिला – ''भारत के स्वाधीनता संघर्ष में धार्मिक, सामाजिक आन्दोलन'' राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर (राजस्थान), 1998 पृ. 54
4.वही–पृ. 55, अन्यत्र देखें – कैलाश चन्द्र जैन – भारत का राष्ट्रीय आंदोलन, यूनिवर्सिटी प्रकाशन , नई दिल्ली, पुर्नमुद्रण, 2006, पृ. 25–26
5.शुक्ल, रामलखन – आधुनिक भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पुर्नमुद्रण 2002 पृ–354
6. वही पृ. 354
7. शिरोल, वेलेण्टाइन – इण्डिया अरनेस्ट, लंदन मैकमिलन एण्ड कंपनी 1921
8. सरस्वती, दयानंद –सत्यार्थ प्रकाश, तेरहवॉ तथा चौदहवॉ सम्मुलास देखें।
9. जोशी, अनिला – पूर्वोक्त पृ. 58–59
10.देसाई ए. आर. – ''भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि'' मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, दिल्ली व अन्य, पुर्नमुद्रण–2000 पृ. 233